नारी शक्तिः परंपरा की संरक्षक, विकास की अग्रदूत

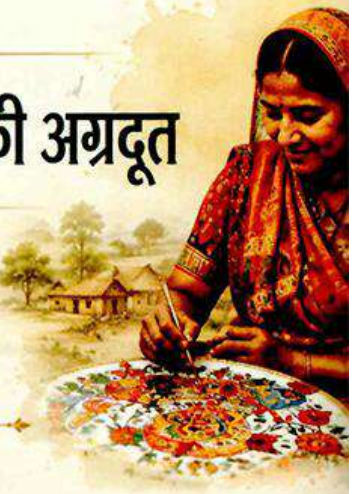

महिला सशक्तीकरण | हथकरघा एवं शिल्प संरक्षण | लोककला एवं परंपराओं का संवर्धन | पारंपरिक ज्ञान और खाद्य परंपराओं का संरक्षण | सामुदायिक सशक्तीकरण और आजीविका सृजन | विकसित भारत 2047

डॉ. मधुबंती दत्ता

भारत की सांस्कृतिक विविधता का सबसे सशक्त स्वरूप उसके ग्रामीण समुदायों में दिखाई देता है जहाँ महिलाएँ पारम्परिक ज्ञान, भाषाओं, लोक कलाओं, हस्तशिल्पों तथा पाक-परम्पराओं के संरक्षण में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं। यही विरासत भारत की सभ्यतागत चेतना को निरंतर सशक्त बनाए रखती है। परिवारों, समुदायों तथा महिला-नेतृत्व वाले संस्थानों में अपनी सक्रिय भागीदारी के माध्यम से वे सांस्कृतिक परम्पराओं की निरंतरता सुनिश्चित करती हैं। साथ ही, आजीविका सृजन, सामाजिक एकता तथा सतत विकास में भी महत्त्वपूर्ण योगदान देती हैं। सहायक नीतियों और सामूहिक उद्यमों के बल पर ग्रामीण महिलाएँ सांस्कृतिक संपदाओं को समावेशी विकास के अवसरों में परिवर्तित कर रही हैं। भारत की सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण तथा विकसित भारत 2047 के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए नारी शक्ति की भूमिका को पहचानना और उसे सशक्त बनाना अत्यंत आवश्यक है।

पिछले एक दशक में भारत ने महिलाओं को केवल विकास की लाभार्थी के रूप में देखने की सोच से आगे बढ़कर उन्हें सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की प्रमुख प्रेरक शक्ति के रूप में स्वीकार किया है। जीवन-चक्र आधारित दृष्टिकोण के माध्यम से विभिन्न नीतियों और कार्यक्रमों ने महिलाओं की स्वास्थ्य, शिक्षा, पोषण, आजीविका, वित्तीय समावेशन तथा नेतृत्व के अवसरों तक पहुँच का विस्तार किया है। स्वच्छता, आवास, स्वच्छ ईंधन तथा नल से जल जैसी बुनियादी सुविधाओं की बेहतर उपलब्धता ने महिलाओं के जीवन की गरिमा और गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार किया है।

स्वयं सहायता समूह महिला-नेतृत्व वाले विकास के सशक्त माध्यम के रूप में उभरे हैं। माननीय प्रधानमंत्री ने भी इस बात पर बल दिया है कि भारत की विकास यात्रा अब 'महिला विकास' से आगे बढ़कर 'महिला नेतृत्व वाले विकास' की दिशा में अग्रसर है, जहाँ महिलाओं को सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन की सक्रिय भागीदार तथा नेतृत्वकर्ता के रूप में मान्यता दी गई है।

आज भारत के भविष्य के निर्माण में नारी शक्ति की भूमिका को व्यापक रूप से स्वीकार किया जा रहा है। आर्थिक योगदान से परे, ग्रामीण महिलाएँ भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत की संरक्षक हैं। परम्पराओं, भाषाओं, हस्तशिल्पों, लोकाचारों तथा स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों के संरक्षण के माध्यम से वे उस सांस्कृतिक विविधता को जीवित रखती हैं, जो भारत की सभ्यतागत पहचान की आधारशिला है। उनका योगदान केवल सांस्कृतिक संरक्षण तक सीमित नहीं है बल्कि आजीविका सृजन, सामुदायिक सुदृढ़ता और सतत ग्रामीण विकास तक विस्तृत है। विकसित भारत 2047 की दिशा में अग्रसर भारत के लिए सांस्कृतिक विविधता की संरक्षक के रूप में महिलाओं को सशक्त बनाना एक समावेशी, आत्मविश्वासी और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध राष्ट्र के निर्माण की अनिवार्य शर्त है।

लेखिका अर्थशास्त्री हैं तथा संसाधन प्रबंधन, सतत विकास एवं जलवायु अनुकूल विकास क्षेत्र में विशेषज्ञता रखती हैं।
ईमेलः duttamadhubanti89@gmail.com

सांस्कृतिक विविधता की संरक्षक

भारत की सांस्कृतिक विविधता का अस्तित्व मुख्यतः ग्रामीण जीवन में निहित सामुदायिक परम्पराओं के माध्यम से बना हुआ है, जिनके संरक्षण में महिलाओं की भूमिका अग्रणी है। कृषि और सामुदायिक जीवन से जुड़ी सांस्कृतिक परम्पराओं में उनका योगदान विशेष रूप से दिखाई देता है। असम में महिलाएँ गीत, नृत्य, बुनाई तथा कृषि चक्र से जुड़े अनुष्ठानों के माध्यम से बिहू की सांस्कृतिक आत्मा को जीवित रखती हैं। वहीं तमिलनाडु में महिलाएँ पोंगल पर्व की परम्पराओं को कोलम कला, पारम्परिक व्यंजनों और कृषि तथा प्रकृति के संबंध का उत्सव मनाने वाले अनुष्ठानों के माध्यम से संरक्षित करती हैं।

ग्रामीण महिलाएँ स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों की भी प्रमुख संरक्षक हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) तथा विभिन्न जनजातीय अनुसंधान संस्थानों द्वारा किए गए अध्ययनों में बीज संरक्षण, औषधीय पौधों, खाद्य प्रसंस्करण तथा जल संरक्षण से संबंधित महिलाओं के पारम्परिक ज्ञान का दस्तावेजीकरण किया गया है। हिमालयी क्षेत्रों में महिलाएँ औषधीय जड़ी-बूटियों और जलवायु-अनुकूल कृषि पद्धतियों का ज्ञान संरक्षित करती हैं, जबकि मध्य भारत की जनजातीय महिलाएँ वन संसाधनों के सतत उपयोग के माध्यम से जैव विविधता की रक्षा करती हैं।

इनका योगदान केवल सांस्कृतिक संरक्षण तक सीमित नहीं है। स्वदेशी ज्ञान प्रणालियाँ जलवायु अनुकूलन, खाद्य सुरक्षा तथा प्राकृतिक संसाधनों के सतत प्रबंधन को भी सुदृढ़ बनाती हैं। परम्पराओं और स्थानीय ज्ञान प्रणालियों को जीवित रखते हुए ग्रामीण महिलाएँ न केवल सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण करती हैं बल्कि अधिक सशक्त, आत्मनिर्भर और लचीले ग्रामीण समुदायों के निर्माण में भी योगदान देती हैं।

लोक परम्पराओं और स्थानीय भाषाओं का संरक्षण

ग्रामीण महिलाएँ लोकगीतों, कथावाचन परम्पराओं, स्थानीय इतिहासों और क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से भारत की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। अपनी दैनिक सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यम से वे सामूहिक स्मृतियों, सामाजिक मूल्यों तथा स्वदेशी ज्ञान को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का कार्य करती हैं। लोरियाँ, विवाह गीत, फसल गीत, भक्ति-गान, लोककथाएँ और सामुदायिक आख्यान आज भी परिवारों और समुदायों में महिलाओं के माध्यम से संरक्षित और प्रसारित हो रहे हैं।

महिला नेतृत्व वाली यह सांस्कृतिक परम्परा देश के विभिन्न क्षेत्रों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। राजस्थान में महिलाएँ मांड और पनिहारी लोकगीतों को संरक्षित कर रही हैं जो स्थानीय इतिहास और मरुस्थलीय जीवन की झलक प्रस्तुत हैं। छत्तीसगढ़ में महिला कलाकार पंडवानी कथावाचन परम्परा को जीवित रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं जबकि बंगाल की बाउल परम्परा गीतों के माध्यम से आध्यात्मिक शिक्षाओं का प्रसार करती है। ये परम्पराएँ न केवल सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करती हैं बल्कि सामुदायिक एकता और पीढ़ियों के बीच ज्ञान के आदान-प्रदान को भी सुदृढ़ बनाती हैं।

भारत की भाषायी विविधता के संरक्षण में भी महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अनेक स्थानीय बोलियाँ और उपभाषाएँ आज विलुप्त होने के खतरे का सामना कर रही हैं। ऐसे में महिलाएँ परिवारों और समुदायों के भीतर स्थानीय भाषाओं की प्रमुख संवाहक के रूप में कार्य करती हैं। गीतों, कहानियों और बोलियों को संरक्षित रखते हुए वे सुनिश्चित करती हैं कि सांस्कृतिक पहचान, पारम्परिक ज्ञान और स्थानीय विरासत तीव्र सामाजिक परिवर्तन के दौर में भी जीवंत और प्रासंगिक बनी रहे।

पारम्परिक हस्तशिल्प, हथकरघा विरासत और पाक परम्पराओं का संरक्षण

महिला शिल्पकारों ने भारत की अनेक पारम्परिक कला एवं शिल्प परम्पराओं को जीवित बनाए रखने में निर्णायक भूमिका निभाई है। बिहार की मधुबनी चित्रकला, पंजाब की फुलकारी कढ़ाई, तमिलनाडु की टोड़ा कढ़ाई, पूर्वोत्तर भारत के बाँस शिल्प तथा गुजरात की कच्छ कढ़ाई जैसी विशिष्ट कलाओं के संरक्षण में महिलाओं का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा है। भारत के हथकरघा क्षेत्र में भी महिलाओं की भागीदारी उल्लेखनीय है। वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित बुनाई परम्पराओं को संरक्षित करते हुए स्थानीय इतिहास, कलात्मक अभिव्यक्तियों और सांस्कृतिक प्रतीकों को जीवित रखती हैं। ये शिल्पकृतियाँ विभिन्न समुदायों की विशिष्ट पहचान और सांस्कृतिक विरासत का प्रतिनिधित्व करती हैं।

ग्रामीण महिलाएँ पारम्परिक खाद्य संस्कृतियों की भी संरक्षक हैं, जो स्थानीय पारिस्थितिक ज्ञान और कृषि विविधता को प्रतिबिंबित करती हैं। स्वदेशी व्यंजन, मोटे अनाजों (श्री अन्न) पर आधारित आहार, खाद्य पदार्थों के किण्वन की पारम्परिक तकनीकें तथा मौसमी भोजन संबंधी प्रथाएँ लंबे समय से महिलाओं द्वारा परिवारों में संरक्षित की जाती रही हैं। अंतरराष्ट्रीय मिलेट वर्ष के उपरांत मोटे अनाजों पर बढ़ते ध्यान ने यह रेखांकित किया है कि पारम्परिक खाद्य ज्ञान पोषण सुरक्षा, जलवायु अनुकूलन और सतत कृषि को बढ़ावा देने में कितना महत्त्वपूर्ण है।

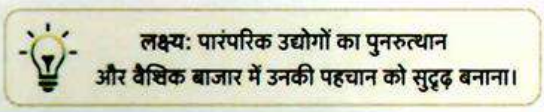

सांस्कृतिक संरक्षण की वाहक : महिला-नेतृत्व वाले संस्थान

स्वयं सहायता समूहों (SHGs), शिल्पकार समूहों तथा सहकारी संस्थाओं के माध्यम से सामूहिक प्रयास सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण और आजीविका सृजन का एक प्रभावी माध्यम बनकर उभरे हैं। ग्रामीण भारत में महिला-नेतृत्व वाले संस्थान पारम्परिक हस्तशिल्प, हथकरघा परम्पराओं और स्वदेशी उत्पादों को संरक्षित करते हुए सांस्कृतिक ज्ञान को आर्थिक अवसरों से जोड़ रहे हैं। दीनदयाल अंत्योदय योजना–राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM) के अंतर्गत दस करोड़ से अधिक महिलाएँ स्वयं सहायता समूहों से जुड़ी हुई हैं।

ये संस्थाएँ महिला शिल्पकारों और कारीगरों को प्रशिक्षण, ऋण सुविधा तथा विपणन अवसर उपलब्ध कराती हैं, जिससे पारम्परिक कलाएँ आर्थिक रूप से भी टिकाऊ बनी रहती हैं। सांस्कृतिक संरक्षण को आर्थिक सशक्तीकरण के साथ जोड़ते हुए महिला-नेतृत्व वाले संगठन स्थानीय पहचान को मजबूत करते हैं, समावेशी विकास को बढ़ावा देते हैं तथा भारत की बहुरंगी सांस्कृतिक विरासत की निरंतरता सुनिश्चित करते हैं।

सांस्कृतिक संरक्षण में महिलाओं को समर्थन देने वाली सरकारी पहलें

सांस्कृतिक विरासत और ग्रामीण आजीविका के बीच गहरे संबंध को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने अनेक ऐसी योजनाएँ प्रारम्भ की हैं जो महिला शिल्पकारों, बुनकरों तथा पारम्परिक ज्ञान की संवाहक महिलाओं को समर्थन प्रदान करती हैं। इन पहलों का उद्देश्य सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण करते हुए ग्रामीण महिलाओं के लिए आर्थिक अवसरों का विस्तार करना है।

दीनदयाल अंत्योदय योजना–राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM) के अंतर्गत लाखों महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों में संगठित किया गया है, जो हस्तशिल्प, हथकरघा उत्पादन तथा पारम्परिक खाद्य प्रसंस्करण जैसे कार्यों से जुड़े हैं। पारम्परिक उद्योगों के पुनरुत्थान हेतु निधि योजना (SFURTI) शिल्पकार समूहों को आधारभूत संरचना, कौशल उन्नयन तथा विपणन सुविधाएँ प्रदान करती है। इसी प्रकार एक जिला एक उत्पाद (ODOP) पहल क्षेत्र-विशिष्ट शिल्प और उत्पादों को प्रोत्साहित कर पारम्परिक कारीगरों को व्यापक पहचान दिलाने में सहायक बनी है।

जनजातीय महिला शिल्पकारों को भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास महासंघ (TRIFED) की पहलों से विशेष लाभ हुआ है। यह संस्था विपणन संपर्कों तथा ट्राइब्स इंडिया जैसे मंचों के माध्यम से स्वदेशी उत्पादों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों तक पहुँचाने का कार्य करती है। वहीं राष्ट्रीय हथकरघा विकास कार्यक्रम डिजाइन नवाचार, कौशल संवर्धन तथा हथकरघा उत्पादों के विपणन को बढ़ावा देता है।साथ ही , भौगोलिक संकेतक (GI) टैगिंग किसी विशेष क्षेत्र से जुड़े पारम्परिक शिल्पों और सांस्कृतिक उत्पादों की विशिष्टता तथा प्रामाणिकता की रक्षा करती है। सांस्कृतिक संरक्षण को उद्यमिता, कौशल विकास और बाज़ार तक पहुँच से जोड़कर ये पहलें ग्रामीण महिलाओं को पारम्परिक ज्ञान और सांस्कृतिक संपदा को टिकाऊ आजीविका के अवसरों में रूपांतरित करने में सक्षम बना रही हैं।

क्षेत्रीय सर्वोत्तम पहलें और प्रेरक सफलता की कहानियाँ

देश के विभिन्न भागों से अनेक ऐसी प्रेरक सफलता की कहानियाँ सामने आई हैं, जो दर्शाती हैं कि किस प्रकार ग्रामीण महिलाओं ने सांस्कृतिक संरक्षण को आर्थिक सशक्तीकरण के साथ सफलतापूर्वक जोड़ा है।

बिहार की महिला कलाकारों ने मधुबनी चित्रकला को स्थानीय सीमाओं से निकालकर राष्ट्रीय और वैश्विक पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जो कला कभी घरों की दीवारों पर बनने वाली पारम्परिक अनुष्ठानिक चित्रकला तक सीमित थी, वह आज विश्व स्तर पर मान्यता प्राप्त सांस्कृतिक उत्पाद के रूप में स्थापित हो चुकी है। इससे हज़ारों महिलाओं को आजीविका के अवसर प्राप्त हुए हैं और साथ ही, मिथिला क्षेत्र की कलात्मक विरासत का संरक्षण भी सुनिश्चित हुआ है।

गुजरात में महिला शिल्पकारों ने सहकारी समितियों और स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से कच्छ कढ़ाई की पारम्परिक कला को नया जीवन प्रदान किया है। उनके प्रयासों ने इस जटिल और विशिष्ट शिल्प परम्परा को संरक्षित रखने के साथ-साथ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों तक इसकी पहुँच का विस्तार किया है।

पूर्वोत्तर भारत भी एक प्रेरणादायक उदाहरण प्रस्तुत करता है, जहाँ महिला नेतृत्व वाले बुनाई उद्यम स्वदेशी वस्त्र परम्पराओं को जीवित रखे हुए हैं। पारम्परिक शॉल और हस्तनिर्मित वस्त्र जनजातीय समुदायों के सांस्कृतिक प्रतीकों, इतिहास और पहचान को संजोए हुए हैं।

इसी प्रकार, केरल का कुडम्बश्री नेटवर्क महिला नेतृत्व वाले उद्यमों के माध्यम से पारम्परिक खाद्य पदार्थों और स्वदेशी उत्पादों को बढ़ावा देने में सफल रहा है। यह पहल दर्शाती है कि सांस्कृतिक विरासत को आजीविका सृजन और स्थानीय आर्थिक विकास से प्रभावी रूप से जोड़ा जा सकता है।

सतत विकास के लिए ग्रामीण महिलाओं का सशक्तीकरण

ग्रामीण महिलाओं का सशक्तीकरण भारत के समावेशी और सतत विकास के दृष्टिकोण का एक केंद्रीय तत्व है। यह केवल आर्थिक अवसरों का विस्तार ही नहीं करता, बल्कि सामाजिक समावेशन को मजबूत बनाता है, सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण करता है और सशक्त एवं लचीले ग्रामीण समुदायों के निर्माण में योगदान देता है।

स्वयं सहायता समूहों, सहकारी संस्थाओं और महिला-नेतृत्व वाले उद्यमों के माध्यम से पारम्परिक हस्तशिल्प, हथकरघा उत्पाद और सांस्कृतिक सम्पदाएँ आज आय तथा उद्यमिता के महत्त्वपूर्ण स्रोत बनती जा रही हैं।

आर्थिक सशक्तीकरण महिलाओं की घरेलू और सामुदायिक निर्णय-निर्माण प्रक्रियाओं में भागीदारी को भी बढ़ाता है। वित्तीय स्वतंत्रता उन्हें स्थानीय शासन प्रक्रियाओं में प्रभावी भूमिका निभाने, सामुदायिक आवश्यकताओं की वकालत करने तथा सामाजिक परिवर्तन में सक्रिय योगदान देने में सक्षम बनाती है। प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, खाद्य प्रणालियों और जैव विविधता संरक्षण से जुड़ा उनका पारम्परिक ज्ञान जलवायु अनुकूलन और सतत विकास को भी सुदृढ़ करता है।

विरासत का संरक्षण

महत्वपूर्ण योगदान के बावजूद ग्रामीण महिलाओं को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। तीव्र शहरीकरण, पलायन और बदलती जीवनशैली के कारण पीढ़ियों के बीच पारम्परिक ज्ञान के हस्तांतरण की प्रक्रिया कमज़ोर हुई है। व्यावसायीकरण ने अनेक पारम्परिक प्रथाओं को प्रभावित किया है, जबकि महिला शिल्पकारों को मशीन-निर्मित उत्पादों से प्रतिस्पर्धा, सीमित बाज़ार पहुँच, अपर्याप्त डिजिटल साक्षरता तथा उनके सांस्कृतिक श्रम की पर्याप्त मान्यता न मिलने जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए संस्कृति को सतत विकास के एक महत्त्वपूर्ण संसाधन के रूप में स्वीकार करना आवश्यक है। ऋण सुविधा, कौशल विकास, डिजिटल साक्षरता, ब्रांडिंग तथा बाज़ार संपर्क के माध्यम से महिला-नेतृत्व वाले सांस्कृतिक उद्यमों को सुदृढ़ बनाकर पारम्परिक ज्ञान को टिकाऊ आजीविका के अवसरों में परिवर्तित किया जा सकता है। साथ ही, शैक्षणिक संस्थानों, स्थानीय निकायों और सामुदायिक संगठनों को युवा पीढ़ी में सांस्कृतिक जागरूकता बढ़ाने के लिए सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।

भौगोलिक संकेतक (GI) संरक्षण के विस्तार, सांस्कृतिक पर्यटन, डिजिटल विपणन मंचों तथा समुदाय-आधारित विरासत संरक्षण पहलों के माध्यम से पारम्परिक सांस्कृतिक प्रथाओं की दृश्यता और आर्थिक महत्ता को और अधिक बढ़ाया जा सकता है।

निष्कर्ष

ग्रामीण महिलाएँ भारत की जीवंत सांस्कृतिक विरासत की वास्तविक संरक्षक हैं। वे उन परम्पराओं, भाषाओं, हस्तशिल्पों, पाक-परम्पराओं और स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों को संरक्षित रखती हैं, जो भारत की सांस्कृतिक विविधता को समृद्ध बनाती हैं। उनका योगदान केवल सांस्कृतिक निरंतरता तक सीमित नहीं है बल्कि आजीविका सृजन, सामाजिक समावेशन, पर्यावरणीय स्थिरता और सामुदायिक सुदृढ़ता तक विस्तृत है।

इन महिलाओं की भूमिका को पहचानना और उन्हें सशक्त बनाना न केवल भारत की सांस्कृतिक बहुलता की रक्षा के लिए आवश्यक है, बल्कि एक समावेशी, सांस्कृतिक रूप से आत्मविश्वासी और सतत विकसित भारत के निर्माण के लिए भी अनिवार्य है। विकसित भारत 2047 की दिशा में अग्रसर भारत के लिए सांस्कृतिक विरासत की संरक्षक और विकास की सक्रिय भागीदार के रूप में ग्रामीण महिलाओं का सशक्तीकरण अत्यंत महत्त्वपूर्ण होगा। इससे न केवल देश की सांस्कृतिक समृद्धि सुरक्षित रहेगी, बल्कि यह भी सुनिश्चित होगा कि नारी शक्ति की प्रेरणादायी ऊर्जा भारत की प्रगति का मार्गदर्शन करती रहे। ❑